मानव-समानता
और
इस्लाम

लेखक
डॉ॰ फ़रहत हुसैन

द बोर्ड ऑफ़ इस्लामिक पब्लिकेशंस
नई दिल्ली-110025

© The Board of Islamic Publications

नाम किताब : मानव-समानता और इस्लाम
लेखक : डॉ॰ फ़रहत हुसैन
प्रथम संस्करण : 2022 ई॰
पृष्ठ : 24
संख्या : 500
मूल्य : 22/-
मुद्रक : ज़ाविया प्रिन्ट

प्रकाशक :
द बोर्ड ऑफ़ इस्लामिक पब्लिकेशंस
D-307, अबुल-फ़ज़्ल इंक्लेव
जामिआ नगर, नई दिल्ली-25

Book Name : Manaw-Samanta aur Iaslam
By : Dr. Farhat Hussain
First Edition : 2022 Pages : 24
Price : 22/- ISBN :
Printed at : Zawia Print

Printed by
The Board of Islamic Publications
D-307-A, Abul Fazl Enclave,
Jamia Nagar, New Delhi-110025
Phone : 011-26971423, Mob.: 9990862029
E-mail : radianceweekly@gmail.com
Website : www.radianceweekly.in

‘ईश्वर के नाम से जो बड़ा कृपाशील और अत्यन्त दयावान है।’

दो शब्द

आज यह तथ्य लगभग सर्वमान्य है कि इस धरती पर बसनेवाले सभी इनसान एक ही वर्ग से सम्बन्ध रखते हैं और उनका मूल एक ही है तथा एक ही इनसानी जोड़े की सन्तान ज़मीन पर फैली है। अतः उनके बीच भेदभाव करना, किसी को ऊँचा किसी को नीचा समझना; किसी को सत्ता और शासन का जन्मजात अधिकारी समझना किसी को जन्मजात शासित और सेवक बल्कि गुलाम घोषित कर देना सामाजिक न्याय के विरुद्ध है। मानवता की यह अजीब विडम्बना है कि इस अन्याय का मनुष्य सदैव शिकार हुआ है। आधुनिक युग में निस्सन्देह कुछ सुधारात्मक क़दम उठाए गए हैं और कुछ संस्थाओं ने सराहनीय कार्य भी किए हैं, परन्तु कुल मिलाकर मानवाधिकार और सामाजिक न्याय की स्थिति आज भी चिन्ताजनक है और मानव-जाति के समक्ष यह एक बड़ी समस्या के रूप में मौजूद है। प्रस्तुत पुस्तिका में संक्षेप में इस समस्या के वास्तविक समाधान पर प्रकाश डाला गया है।

मुहम्मद इक़बाल मुल्ला

सचिव, जमाअत इस्लामी हिन्द

मानव-समानता और इस्लाम

समस्या

सामाजिक अन्याय और इनसानों के बीच जाति, धर्म, क्षेत्र और भाषा के आधार पर भेदभाव प्राचीन युग से आज तक चला आ रहा है। यह भेदभाव आगे बढ़कर द्वेष, घृणा, दुश्मनी, अपमान, ज़ुल्म-ज़्यादती, अत्याचार और मानवाधिकार-हनन तक पहुँच जाता है। निहित स्वार्थों के चलते भेदभावपूर्ण व्यवस्था के पक्ष में दलीलें इकट्ठा की गईं, नियम-क़ानून और सिद्धान्त बनाए गए, यहाँ तक कि इस भेदभावपूर्ण नीति को धार्मिक मान्यता प्रदान की गई। कई क़ौमों और देशों ने इसे अपनी स्थाई नीति बनाकर कार्य किए। यहूदियों ने अपनी क़ौम को अल्लाह की चहेती क़ौम ठहराया और धार्मिक कार्यों में भी ग़ैर-इसराईलियों को अपने से नीचे स्तर पर रखा। हिन्दुओं के यहाँ वर्णाश्रम को धार्मिक मान्यता दी गई, जिसके अनुसार ब्राह्मणों को श्रेष्ठ माना गया। उच्च वर्ग के अतिरिक्त सारे लोग 'दूसरे दर्जे' के ठहराए गए। शूद्रों को तो अत्यन्त हीन स्थिति में डाल दिया गया। एक समय ऐसा भी था कि उन्हें बुनियादी मानवाधिकार भी प्राप्त न थे। रंगभेद ने अफ़्रीक़ा और अमेरिका के काले लोगों पर जो अत्याचार किए हैं, उनसे इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं और यह सिलसिला आज तक जारी है। यूरोपीय लोगों ने अमेरिकी महाद्वीप में घुसकर वहाँ के मूल निवासियों, रेड इंडियन नस्ल पर इसी अवधारणा के तहत नस्लकुशी की। एशिया और अफ़्रीक़ा के कमज़ोर देशों पर अपना आधिपत्य स्थापित करके जो अमानवीय और भेदभावपूर्ण व्यवहार किए गए और आज इक्कीसवीं शताब्दी में भी जारी हैं, उनका कारण भी यही सोच है कि हमारे देश और हमारी क़ौम से बाहर पैदा होनेवालों की जान, माल और इज़्ज़त पर हाथ डालने में कोई बुराई नहीं है। पाश्चात्य देशों के जातिवाद ने एक जाति को दूसरी जातियों के लिए जिस प्रकार हिंसक बना दिया है, उसके उदाहरण विश्व युद्ध के इतिहास से लेकर आज के समाचार पत्रों और न्यूज़ चैनलों पर देखे जा सकते हैं।

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार घोषणापत्र

समस्या के समाधान के लिए कुछ प्रयास भी किए जाते रहे हैं। आधुनिक युग में भेदभाव पूर्ण नीति को समाप्त करने और मानवाधिकार संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने 10 दिसंबर 1948 को 'मानवाधिकारों का वैश्विक घोषणा-पत्र' (Universal Declaration of Human Rights) स्वीकार किया, जो वास्तव में एक सराहनीय कार्य है। इस घोषणा-पत्र में मानवाधिकारों का सम्मान करने; जाति, लिंग, भाषा तथा धर्म के आधार पर भेदभाव किए बिना सभी इनसानों को बुनियादी स्वतन्त्रता दिलवाने की बात कही गई है। इस पूरे घोषणा-पत्र पर किसी सदस्य देश ने आपत्ति नहीं की और आपत्तिजनक कोई बात इसमें है भी नहीं। सभी घोषणाएँ मानवाधिकारों को बढ़ावा देनेवाली हैं। परन्तु समस्या यह है कि मानवाधिकारों को लागू कौन करेगा? जो देश या समुदाय इनका हनन करे या घोषणाओं के विपरीत कार्य करे, उसके विरुद्ध कार्यवाही करने का अधिकार किसके पास होगा? यदि यह अधिकार (Authority) किसी के पास नहीं है तो फिर ये घोषणाएँ 'सुन्दर इच्छाओं' से अधिक कुछ भी नहीं।

इस्लाम द्वारा प्रस्तुत समाधान

इस पष्ठभूमि में समस्या के समग्र व्यावहारिक एवं संतुलित समाधान में इस्लामी शिक्षाओं का निष्पक्ष अध्ययन आश्चर्यचकित कर देता है। आज से 1450 पूर्व पवित्र क़ुरआन ने मानव एकता, इनसानी बराबरी और भेदभाव रहित समाज की जो शिक्षाएँ प्रस्तुत की हैं, वे क्रान्तिकारी भी हैं और मानव स्वभाव के अनुरूप भी हैं। फिर महाईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने उन सिद्धान्तों की व्याख्या की और स्वयं आगे बढ़कर समानता और बराबरी का अभूतपूर्व नमूना पेश किया। जब हम उनके आख़िरी हज के संबोधन को पढ़ते हैं तो ज्ञात होता है कि यह संबोधन मानवाधिकार का सबसे बड़ा घोषणा-पत्र है। वर्गविहीन समाज की यह अवधारणा संयुक्त राष्ट्र के 1948 के घोषणा-पत्र से बहुत पहले की है जिसे लोगों की आस्था से जोड़कर उसके पालन को धार्मिक स्तर पर अनिवार्य बना दिया गया। फिर इस समता, समानता और बराबरी को स्वयं हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने समाज में लागू

किया और उनके उत्तराधिकारियों ने भी इसे जारी रखा जिसके विवरण इतिहास में प्रामाणिक रूप से दर्ज हैं।

इस्लामी योगदान की विशेषता

सामाजिक न्याय का इस्लामी अभियान अन्य अभियानों की तुलना में निम्न बिन्दुओं के आधार पर अपनी विशिष्ट पहचान रखता है—

1. इस्लाम अपने सुधारात्मक कार्य की शुरुआत बाहर से नहीं बल्कि अन्दर से करता है और इनसान के अन्तःकरण उसकी अन्तरात्मा को झंझोड़ता है। ईशभय, अपने कार्यों के प्रति जवाबदेही तथा परलोक में ईश्वर के आशीष की प्राप्ति की आकाँक्षा, इनसान के व्यक्तित्व में मज़बूती प्रदान करती है। समाज सुधार के अन्य कार्यक्रमों का यह पहलू बहुत कमज़ोर रहा है।

2. सामाजिक न्याय तथा इनसानी बराबरी और भाईचारे को इस्लाम ने बड़ी गम्भीरता से लिया। इस सम्बन्ध में एक अवधारणा (Ideology) प्रस्तुत की। यह अवधारणा पूर्ण तथा सन्तुलित होने के साथ-साथ व्यावहारिक अर्थात् लागू करने योग्य थी और आज भी है। इस अवधारणा को इस्लामी विश्वासों से जोड़कर समाज में अमली तौर पर पूर्ण निष्पक्षता के साथ लागू किया गया है और सामाजिक न्याय और भाईचारे के ऐसे उदाहरण और नमूने पेश किए गए जो सुनहरे अक्षरों से लिखने योग्य हैं। इस्लाम ने अरबों की कायापलट कर दी। ऊँच-नीच, काले-गोरे, आक़ा और ग़ुलाम का भेद समाप्त कर दिया। ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने सार्वजनिक घोषणा कर दी थी कि ''अज्ञानताकाल की समस्त रूढ़िवादी परम्पराएँ मेरे पैरों तले हैं'' अर्थात् पूर्णरूप से निरस्त कर दी गई हैं। उनके अनुयायियों ने इस शिक्षा को गाँठ में बाँध लिया और यही लोग जब इस्लाम का झण्डा लेकर दूसरे देशों में पहुँचे, तो वहाँ भी नस्ली भेदभाव समाप्त होता चला गया। अफ़्रीक़ा के काले जब इस्लाम की छत्रछाया में आ गए, तो इस्लामी बिरादरी का अटूट अंग बन गए जबकि इससे पहले वह जन्मजात ग़ुलाम समझे जाते थे। इस्लाम से बाहर आधुनिक युग में आज भी उन्हें बराबरी का दर्जा प्राप्त नहीं है। तात्पर्य यह है कि इस्लाम ने सामाजिक न्याय के उसूल भी बनाए और

उनको सोसाइटी में लागू भी किया।

3. नैतिक चेतना और अन्तरात्मा को अपील करने के साथ इस्लाम ने शासन-प्रशासन और क़ानून व्यवस्था द्वारा अधिक बिगड़े लोगों से सख़्ती से निपटने का प्रबन्ध भी किया और आचार-संहिता के साथ-साथ दण्ड-विधान भी बनाया और उसे अन्तिम विकल्प के रूप में पूर्ण निष्पक्षता के साथ समाज के सभी वर्गों पर लागू किया।

इस्लामी शिक्षाएं

सामाजिक न्याय तथा समता-समानता सम्बन्धी इस्लामी शिक्षाओं को यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. सभी इनसान एक जोड़े की सन्तान हैं :

पवित्र क़ुरआन में अनेक स्थानों पर इस तथ्य का उल्लेख किया गया है। सबसे महत्वपूर्ण अंश इस प्रकार है—

> "ऐ लोगो ! हमने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और क़बीलों का रूप दिया ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह के यहाँ तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुममें सबसे अधिक ईशभय रखता है।" (क़ुरआन, 49:13)

क़ुरआन के इस अंश में मानवजाति को प्रत्यक्ष रूप से सम्बोधित करके उस बड़ी बुराई को समाप्त किया गया है जो सदैव विश्वव्यापी बिगाड़ के मूल में रही है अर्थात् रूप-रंग, जाति-भाषा और क़ौम का भेदभाव। इसमें तीन महत्वपूर्ण बातें प्रस्तुत की गई हैं—

पहली बात यह कि सभी इनसानों का आरम्भ एक है, क्योंकि एक ही पुरुष और एक ही स्त्री से सम्पूर्ण मानवजाति का आविर्भाव हुआ है और आज तुम्हारी जितनी नस्लें भी दुनिया में पाई जाती हैं वे वास्तव में एक प्रारम्भिक नस्ल की शाखाएँ हैं। इस जीवन-शृंखला में किसी जगह भी उस भेद और ऊँच-नीच के लिए कोई आधार नहीं पाया जाता जिसके भ्रम में तुम पड़े हुए हो। तुम्हारा स्रष्टा एक ईश्वर है; ऐसा नहीं है कि विभिन्न व्यक्तियों को अलग-अलग ख़ुदाओं ने पैदा किया हो। एक ही प्रकार के तत्व से तुम्हारी रचना की गई है। ऐसा नहीं है कि कुछ इनसान किसी अच्छे तत्व से बनाए

गए हों और कुछ दूसरे लोग किसी घटिया तत्व से बने हों। एक ही प्रक्रिया से तुम पैदा हुए हो, यह नहीं हुआ कि अलग-अलग लोगों की उत्पत्ति की प्रक्रिया भिन्न-भिन्न हो। तुम एक ही माँ-बाप की सन्तान हो, यह नहीं हुआ कि प्रारम्भिक मानव जोड़े बहुत-से रहे हों, जिनसे दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों की आबादियाँ अलग-अलग पैदा हुई हों।

दूसरी बात यह कि अपने मूल के आधार पर एक होने पर भी तुम्हारा जातियों और वंशों में विभाजित हो जाना एक स्वभाविक बात थी। पूरी धरती पर सारे इनसानों का एक परिवार के रूप में बसना सम्भव न था, इसलिए नस्ल बढ़ने के साथ-साथ अनेक परिवार बने और उनसे वंश और समुदाय बनते गए तथा रंग, रूप, भाषा और रहन-सहन में अन्तर भी आता चला गया। परन्तु इस स्वाभाविक अन्तर का यह अर्थ कदापि नहीं था कि उसके आधार पर ऊँच-नीच और श्रेष्ठ व हीन के भेदभाव स्थापित किए जाएँ। एक वर्ग दूसरे पर अपनी प्रधानता जताए, एक रंग के लोग दूसरे रंग के लोगों को तुच्छ और हीन समझें, या एक समुदाय दूसरे समुदाय पर अपनी उच्चता जमाए! स्रष्टा ने जिस कारण इनसानों को क़ौमों और वंशों के रूप में बनाया वह मात्र परिचय के लिए था। यह तो शैतानी हथकण्डा है कि जिस चीज़ को परिचय का साधन बनाया गया था लोग उसे अभिमान और घृणा का साधन बना लें और फिर नौबत अत्याचार और शत्रुता तक पहुँच जाए।

तीसरी बात यह कि इनसान और इनसान के बीच 'उच्चता' का कोई आधार हो सकता है तो वह मात्र नैतिकता है। जन्म से सारे इनसान बराबर हैं क्योंकि उनका रचयिता एक है, उनका रचना तत्व एक जैसा है, उनके पैदा होने की प्रक्रिया समान है तथा उनकी वंशावली एक ही माता-पिता तक पहुँचती है। किसी व्यक्ति का किसी विशेष जाति या देश या समुदाय में जन्म लेना एक संयोग की बात है, जिसमें उस व्यक्ति की इच्छा, पसन्द और प्रयास का कोई दख़ल नहीं; इसलिए ये श्रेष्ठता का आधार नहीं हो सकते। वास्तविक चीज़ जिसके कारण एक व्यक्ति को दूसरे की अपेक्षा उच्चता या श्रेष्ठता प्राप्त होती है वह यह है कि वह अपेक्षाकृत अधिक ईशभय रखने वाला, बुराइयों से बचनेवाला और नेकी तथा पवित्रता के मार्ग पर चलनेवाला हो, चाहे वह किसी जाति या क्षेत्र या रंग से सम्बन्ध रखता हो।

(तफ़हीमुल क़ुरआन)

2. सभी इनसानों की उत्पत्ति एक ही प्रकार से की गई

इस्लामी शिक्षाओं के अनुसार सभी इनसानों के पैदा होने की प्रक्रिया तथा मूल तत्व एक समान हैं ।

''हमने तुम्हें पैदा करने का निश्चय किया, फिर तुम्हारा रूप बनाया, फिर हमने फ़रिश्तों से कहा कि आदम के आगे झुक जाओ।''

(क़ुरआन, 7:11)

''वही है जिसने पैदा किया, तुम्हें मिट्टी से फिर वीर्य से फिर रक्त के लोथड़े से फिर वह तुम्हें बच्चे के रूप में निकालता है।

(क़ुरआन, 40:67)

''अल्लाह ने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, फिर वीर्य से, फिर तुम्हें जोड़े-जोड़े बनाया।'' (क़ुरआन, 35:11)

3. सभी इनसान ईश्वर की उत्तम रचना हैं

''निस्सन्देह हमने मनुष्य को सर्वोत्तम संरचना के साथ पैदा किया।''

(क़ुरआन, 95:4)

''हे मनुष्य! किस चीज़ ने तुझे अपने उदार प्रभु के विषय में धोखे में डाल रखा है। जिसने तेरा रूप बनाया फिर नख-शिख से दुरुस्त किया और तुझे सन्तुलन प्रदान किया।'' (क़ुरआन, 82:6-7)

''वह अल्लाह ही तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती को ठहरने का स्थान बनाया और आकाश को एक छत के समान बनाया और तुम्हारी शक्ल व सूरत बनाईं और बहुत अच्छी बनाई।"

(क़ुरआन, 40:64)

4. इनसान को ईश्वर ने ससम्मान धरती में बसाया

''हमने आदम की सन्तान को श्रेष्ठता प्रदान की और उन्हें थल और जल में सवारी दी और अच्छी शुद्ध चीज़ों की उन्हें रोज़ी दी और अपने पैदा किए हुए बहुत से प्राणियों की अपेक्षा उन्हें श्रेष्ठता प्रदान की।'' (क़ुरआन, 17:70)

तात्पर्य यह है कि ईश्वर ने इनसान को धरती पर आदरपूर्वक रखा है और उन्हें अपनी नेमतें प्रदान की हैं इस सम्मान और आशीष में आदम की सम्पूर्ण नस्ल सम्मिलित है। ऐसा नहीं है कि एक वर्ग को यह गौरव प्राप्त हो और दूसरे को नहीं। ऊँच-नीच, आदर और अनादर इनसानों के अपने क़ानून तो हो सकते हैं ईश्वर के नहीं, उसकी दृष्टि में सब बराबर हैं।

5. ज्ञान की शक्ति के साथ पैदा किया

इनसान को ज्ञान प्रदान किया। इसमें कोई भेदभाव नहीं किया गया। आदम (अलैहि०) को ज्ञान दिया गया (क़ुरआन, 2:31-33)। उनके बाद उनकी सम्पूर्ण मानवजाति को ज्ञान का प्रकाश दिया गया—

"मनुष्य को वह ज्ञान प्रदान किया जिससे वह अनभिज्ञ था।"
(क़ुरआन, 96:5)

"रहमान (दयालु प्रभु अल्लाह) ने क़ुरआन सिखाया, उसी ने मनुष्य को पैदा किया, उसे बोलना सिखाया।" (क़ुरआन, 55:1-4)

6. इस्लामी आस्था के सभी बिन्दु मानवीय समानता के पक्षधर हैं

इस्लाम की सभी बुनियादी आस्थाएँ इनसान-इनसान के बीच समता व समानता को बढ़ावा देती हैं—

● **एक ईश्वर में विश्वास**—इस्लामी शिक्षाओं के अनुसार अल्लाह सम्पूर्ण मानवजाति का पालनहार है। क़ुरआन के सबसे पहले मंत्र में यह घोषणा कर दी गई—

"सारी प्रशंसा सम्पूर्ण जगत के पालनहार के लिए है।"
(क़ुरआन, 1:1)

तात्पर्य यह है कि अल्लाह किसी विशेष वर्ग या जाति का रब नहीं, सारे संसार का रब है इसलिए सभी मनुष्य उसके पैदाइशी बन्दे हैं इसीलिए क़ुरआन अनेक स्थानों पर सीधे इनसानों को सम्बोधित करता है—

"ऐ लोगों! बन्दगी करो अपने पालनहार की जिसने तुम्हें और तुमसे पहले के लोगों को पैदा किया, ताकि तुम बच सको।"(क़ुरआन, 2:21)

● **हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) सबके लिए**–एक ईश्वर में विश्वास के बाद, इस्लामी आस्था का दूसरा महत्वपूर्ण बिन्दु ईशदूतत्व है। अन्तिम ईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सारे इनसानों के रहनुमा व मार्गदर्शक हैं–

"ऐ नबी कहो, ऐ लोगो! मैं तुम सबके लिए अल्लाह का रसूल हूँ।" (क़ुरआन,7:158)

"और (ऐ नबी), हमने तो आपको सारे ही मनुष्यों को इकट्ठा करनेवाला, शुभ सूचना देनेवाला और सावधान करनेवाला बनाकर भेजा, किन्तु अधिकतर लोग जानते नहीं।" (क़ुरआन, 34:28)

आप (सल्ल०) सम्पूर्ण जगत के लिए दयालुता हैं–

"हमने आपको सम्पूर्ण जगत के लिए रहमत (दयालुता) बनाकर भेजा है।" (क़ुरआन, 21:107)

● **धर्मग्रन्थ सबके लिए**–ईश्वर का अन्तिम सन्देश पवित्र क़ुरआन सभी इनसानों के मार्गदर्शन के लिए अवतरित किया गया–

"रमज़ान के महीने में क़ुरआन अवतरित हुआ लोगों के मार्गदर्शन के लिए।" (क़ुरआन, 2:185)

"ऐ लोगों! तुम्हारे पास आ गई है नसीहत तुम्हारे रब की ओर से और इसमें उपचार है जो रोग सीनों में हैं और मार्गदर्शन और रहमत है आस्थावानों के लिए।" (क़ुरआन, 10:57)

● **परलोक**–मरने के बाद के जीवन में इस लोक के कर्मों का हिसाब सभी से होगा और अल्लाह पूरे इनसाफ़ के साथ अच्छा बदला या सज़ा देगा। स्वर्ग के आनन्द या नरक की यातनाएँ कर्मों के आधार पर निर्धारित होंगी न कि जाति और वर्ग के आधार पर। इसमें किसी प्रकार का भेदभाव या सिफ़ारिश नहीं चलेगी।

7. इबादत या स्तुति में समानता–इस्लाम में चार प्रकार की इबादतें या उपासनाएँ हैं–नमाज़, रोज़ा, ज़कात व हज। इन सबके द्वारा मनुष्यों में आध्यात्मिक उत्थान के साथ-साथ नैतिक व सामाजिक मूल्यों को बढ़ावा

दिया जाता है। ऊँच-नीच, भेदभाव तथा असमानता को समाप्त करने की इससे अच्छी कोई दूसरी रीति संसार में कहीं भी नहीं पाई जाती। इन चारों के सामाजिक समरसता में योगदान पर संक्षिप्त चर्चा प्रस्तुत है—

नमाज़ : निराकार ईश्वर की स्तुति हेतु दिन-रात में पाँच बार प्रत्येक मुस्लिम मर्द-औरत पर फ़र्ज़ है कि वह उसके सामने खड़ा हो, उसकी शिक्षाओं को पढ़े, उसके आगे झुके, उसे शीष नवाए, उसका गुणगान करे। अपनी याचना उसके आगे प्रस्तुत करे। यह फ़र्ज़ हर एक व्यक्ति पर लागू है, चाहे वह किसी भी जाति या नस्ल का हो और कहीं भी निवास करता हो। सामूहिक रूप से मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के समय सामाजिक एकता का अद्‌भुत नमूना देखने को मिलता है। सभी श्रेणी के मुसलमान, अमीर-ग़रीब, मंत्री-सन्तरी, काले-गोरे एक साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर नमाज़ पढ़ते हैं। नमाज़ की अगुवाई या इमामत के लिए कोई जाति या उपाधि निर्धारित नहीं है। मात्र ज्ञानी और ईश-भय रखनेवालों को इमाम बनाने में वरीयता दी जाती है।

रोज़ा : उपवास और व्रत सभी धर्मों में है। इस्लाम में एक माह, रमज़ान के महीने में पूरे विश्व में एक साथ रोज़े फ़र्ज़ किए गए। सुबह से शाम तक खान-पान और सहवास से बचना, बुराइयों से दूर रहना और ग़रीबों, दबे-कुचलों, भूखे लोगों की ख़बरगीरी करने का आदेश दिया गया है। भेदभाव को मिटाने तथा समाज के कमज़ोर वर्ग से सहानुभूति पैदा करने में यह इबादत बहुत कारगर है।

ज़कात : ज़कात समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों हेतु अनिवार्य दान है। यह सामाजिक भाईचारे को बढ़ाने का बड़ा साधन है। यह दान-पुण्य आम लोगों के लिए है, किसी विशेष जाति का इस पर अधिकार नहीं है, बल्कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने परिवार की भावी पीढ़ियों पर ज़कात का दान खाने की मनाही कर रखी है, ताकि यह दान-पुण्य किसी एक वर्ग का विशेषाधिकार होने से बचा रहे।

हज : यह तीर्थ यात्रा हर वर्ष होती है। जो भी इस यात्रा का व्यय वहन कर सके वह जीवन में एक बार इस फ़र्ज़ को पूरा करे। पूरी दुनिया के मुसलमान इस इबादत के लिए एक ही समय में मक्का नगर में इकट्ठा होते

हैं और हर तीर्थ यात्री (हाजी) एक ही लिबास में दो सफ़ेद चादर ओढ़े हुए होता है। काले-गोरे, अमेरिकी-अफ़्रीक़ी, हिन्दी-चीनी सब एक लिबास में परिक्रमा करने तथा नमाज़ आदि अदा करते हैं। विश्व भाईचारे और समानता का इससे बड़ा कोई उदाहरण नहीं।

8. हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की शिक्षाएँ

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का सम्पूर्ण जीवन भेदभाव को समाप्त करने को समर्पित था जिसके उदाहरण इतिहास के पन्नों में देखे जा सकते हैं। यहाँ सामाजिक न्याय के सम्बन्ध में आपकी शिक्षाओं को उल्लिखित किया जा रहा है—

❖ **अन्तिम हज के भाषण के उद्धरण :**

''लोगो! मेरी बात ध्यान से सुनो, हो सकता है इस वर्ष के बाद इस स्थान पर मैं तुमसे कभी न मिल सकूँ। अज्ञानकाल की समस्त रीतियाँ मेरे पैर के नीचे हैं। तुम सबका प्रभु एक है और बाप भी एक है। किसी अरबवाले को किसी ग़ैर-अरब पर बड़ाई नहीं, न किसी गोरे को किसी काले पर, हाँ बड़ाई तो केवल ईशभय के आधार पर है।'' (बैहक़ी)

❖ **मक्का विजय के अवसर पर फ़रमाया :**

''शुक्र है उस प्रभु का जिसने तुम्हें अज्ञानकाल के घमण्ड से दूर कर दिया। सारे मनुष्य मात्र दो भागों में विभाजित होते हैं—एक सदाचारी व संयमी जो अल्लाह की दृष्टि में सम्मान वाले हैं, दूसरे दुराचारी और दुष्ट जो अल्लाह की नज़र में अपमानित और तुच्छ हैं। सारे इनसान आदम की सन्तान हैं और आदम को मिट्टी से पैदा किया था।'' (बैहक़ी)

❖ ''अल्लाह प्रलय के दिन तुम्हारा गोत्र या वंश नहीं पूछेगा, अल्लाह के यहाँ सम्मानवाला वह है जो सबसे अधिक ईशभय रखता है।''(इब्ने-जरीर)

❖ ''अल्लाह तुम्हारी सूरतें और तुम्हारी दौलत नहीं देखता, वह तो तुम्हारे मन और कर्म देखता है।'' (मुस्लिम)

असमानता पर कुठाराघात

इस्लाम एक ओर तो समता-समानता और सामाजिक न्याय को धरती पर देखना चाहता है, तो दूसरी ओर ऐसे तमाम कारणों व कारकों को समूल

नष्ट करता है जो असमानता को पैदा करते तथा उसे पोषित करते हैं। मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं—

1. जाति, नस्ल (Race)

आदमी किस जाति में पैदा हुआ यह प्राचीनकाल से आज तक ऊँच-नीच और असमानता का महत्वपूर्ण कारक रहा है। भारत में दलित, अरब में ग़ैर- अरब और दास, यहूदियों में अपनी नस्ल से बाहर के लोग वह रुतबा न रखते थे जो सवर्ण या अरबवाले या यहूदी रखते थे। इसी तरह यूनानी, ईरानी, अलग-अलग सामाजिक स्थान रखते थे। इस्लाम ने इसको समाप्त किया कि तुम सब एक जोड़े की सन्तान हो। अलग-अलग क़बीले और गोत्र, छोटा- बड़ा नहीं बनाते; यह तो मात्र पहचान के लिए है।

(देखें, क़ुरआन, 49:13)

2. रंग (Colour)

भेदभाव का बड़ा कारण आदमी की त्वचा का रंग भी रहा है। काले (Negroes) तथा गोरे (Whites) के बीच रंग-भेद पर बहुत कटुता रही है। गोरे, कालों को इनसान मानने को तैयार नहीं थे। अनेक प्रयासों के बाद भी अपेक्षित सुधार नहीं लाया जा सका। पवित्र क़ुरआन में विभिन्न रंग होना एक प्राकृतिक मामला बताया गया है। (देखें,क़ुरआन, 35:27,28)

अन्तिम हज के ऐतिहासिक भाषण में महाईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया, 'लोगो ख़बरदार रहो! तुम सबका रब एक है। किसी अरबवासी को ग़ैर-अरब पर वरीयता नहीं और किसी गोरे को किसी काले पर कोई बड़ाई नहीं।'' (बैहक़ी)

3. भाषा

भाषा के आधार पर किसी को ऊँचा-नीचा समझने को इस्लाम स्पष्ट रूप से नकारता है। अरबवासी अपनी भाषा पर इतना अधिक गर्व करते थे कि अरबी न बोलनेवालों को 'गूंगा' कहते थे। क़ुरआन ने बताया कि ईश्वर ने हर समुदाय में अपने दूत भेजे और वे अपनी क़ौम की भाषा ही बोलते थे।

(देखें, क़ुरआन, 14:4)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने शिष्यों को हेब्रु तथा सुरयानी आदि विदेशी भाषाएँ सीखने को प्रेरित किया।

4. क्षेत्रवाद

इनसानों के पैदा होने तथा रहने-सहने और बसने के स्थानों को भी ऊँच-नीच और भेदभाव का कारण बना लिया गया। अलग-अलग क्षेत्रों में जीवन व्यतीत करने को इस्लाम एक स्वाभाविक क्रिया के रूप में देखता है जैसा कि क़ुरआन के इस अंश से स्पष्ट है–

> ''और उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, फिर क्या देखते हैं कि तुम इनसान हो फैलते जा रहे हो।''
>
> (क़ुरआन, 30:20)
>
> ''कह दो! वही है जिसने तुम्हें धरती में फैलाया और उसी की ओर तुम एकत्र किए जा रहे हो।'' (क़ुरआन, 67:24)

5. पेशा

इनसान अपनी रोज़ी-रोटी कमाने के लिए कौन-सा पेशा अपनाता है यह ऊँच-नीच का एक बड़ा कारण बना। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में इसकी जड़े बहुत गहरी हैं। दूसरे स्थानों पर भी यह सामाजिक असमानता का बड़ा कारक है। आध्यात्म तथा विद्या के क्षेत्र से जुड़े लोगों को समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त था। सेवा-कार्य करनेवालों को नीचा स्थान मिला। सेवकों में भी दर्जा बन्दी हुई और कुछ दलित और शूद्र कहलाए। इस्लाम ने भेदभाव के इस द्वार को बन्द किया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने श्रम को सम्मान प्रदान किया। आपने फ़रमाया–

> ''किसी ने इससे बेहतर रोटी कभी न खाई कि अपने हाथ की कमाई से खाए। अल्लाह के सन्देशवाहक हज़रत दाऊद (अलैहि॰) अपने हाथ के परिश्रम की कमाई खाते थे। (बुख़ारी)

शारीरिक श्रम करके कमानेवालों को आपने सदा सम्मान दिया तथा उन्हें प्रोत्साहित किया। इससे समाज में पेशों को लेकर भेदभाव उत्पन्न न हो सका।

6. समुदायवाद

अपने समुदाय या क़बीले या रिश्तेदारों को दूसरों की तुलना में श्रेष्ठ समझना और उनके ग़लत कार्यों में भी साथ देना, यह मानसिकता भी सामाजिक न्याय की स्थापना में रुकावट रही है। पवित्र क़ुरआन में शिक्षा दी गई–

"ऐ लोगों जो ईमान लाए हो! तुम अल्लाह के लिए इनसाफ़ पर मज़बूती से चलनेवाले, इनसाफ़ की गवाही देनेवाले बनो। देखो, कहीं ऐसा न हो कि किसी विशेष सम्प्रदाय की शत्रुता तुम्हें न्याय से विचलित कर दे।" (क़ुरआन, 5:8)

प्राचीन समय से अब तक 'मेरी क़ौम' (My Community) का नारा इनसानियत को तबाह करता रहा है। क़बीलियाई मारकाट से लेकर विश्व युद्ध तक इससे अछूते नहीं रहे हैं। ग़लत कार्य में अपनी क़ौम को पुकारने को हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अज्ञानता और नरक का मार्ग बताया है। आप (सल्ल॰) ने एक सुन्दर उपमा देकर इस मानसिकता को उजागर कर दिया—

"जो कोई अपनी क़ौम की नाहक़ बात पर मदद करे, तो उसकी मिसाल ऐसी है कि किसी का ऊँट कुँए में गिर रहा हो और तुम उसकी दुम पकड़ कर ख़ुद भी कुँए में जा गिरे।" (अबू दाऊद)

समाज के कमज़ोर वर्ग को सशक्त करना

सामाजिक न्याय के क्षेत्र में इस्लाम का एक उल्लेखनीय योगदान यह है कि उसने समाज के दबे-कुचले तथा आर्थिक व सामाजिक रूप से कमज़ोर वर्गों को केवल समानता ही प्रदान नहीं की, (जैसा कि पीछे उल्लेख किया गया) बल्कि उन्हें सशक्त बनाया, उनको ऊपर उठाया, उनके प्रति आदरभाव पैदा कराया। इस वर्ग में महिलाएं, अनाथ एवं कमज़ोर लोग और ग़ुलाम आदि आते हैं। इन वर्गों के उत्थान के लिए जो शिक्षाएँ भी दी गईं उनको संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. महिलाएं

इस्लाम ने समाज में औरत के दर्जे (Status) को ऊपर उठाया। कई धर्मों में औरतों को पापजननी बताया गया था, इस्लाम ने महिला वर्ग के इस कलंक को धोया। माँ के रूप में उसे अति सम्मानित किया, 'माँ के पैरों तले जन्नत' की शुभ सूचना दी। बेटी के पैदा होने को मुबारक (अच्छा शगुन) बताया और उनके पालन-पोषण को स्वर्ग प्राप्ति का माध्यम बताया। बेटों को उनपर वरीयता देने से रोक दिया। विवाह के समय उनकी सहमति को

महत्व दिया। उन्हें विवाह धन (मेहर) प्राप्त करने का अधिकारी बनाया। आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान की और पिता, पति, पुत्र की विरासत में हिस्सेदार बनाया। इस प्रकार औरत के साथ हो रहे भेदभाव को इस्लाम ने समाप्त किया। दाम्पत्य संबंधों को ईश्वर की निशानी बताया—

> ''यह भी उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हारी सहजाति से तुम्हारे लिए जोड़े पैदा किए, ताकि तुम उनके पास शान्ति प्राप्त करो और उसने तुम्हारे बीच प्रेम तथा दयालुता पैदा की और निश्चय ही इसमें बहुत-सी निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो सोच-विचार करते हैं।'' (क़ुरआन, 30:21)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के अनेक निर्देश हैं जिनमें औरतों से अच्छा व्यवहार करने तथा उनके अधिकार देने को कहा गया है।

2. अनाथ बच्चे तथा अन्य कमज़ोर लोग

यतीम बच्चों, विधवाओं, ग़रीब तथा असहाय लोगों को समाज में बराबरी का दर्जा प्राप्त नहीं होता। इस्लाम ने अपने माननेवालों को आदेश दिया कि उनसे अच्छा व्यवहार करें, उन्हें हीन दृष्टि से न देखा जाए। क़ुरआन एवं हज़रत मुहम्मद(सल्ल॰) की शिक्षाएँ इस संबंध में उपलब्ध हैं। क़ुरआन में नेकी या पुण्य के कार्यों की सूची में इनसानों, विशेषकर वंचित वर्ग की सेवा तथा सहायता को वरीयता दी गई—

> "नेकी यह नहीं है कि तुम अपने मुँह पूर्व तथा पश्चिम दिशा की ओर कर लो, बल्कि नेकी यह है कि अल्लाह पर, अन्तिम दिन, फ़रिश्तों, किताबों और पैग़म्बरों पर ईमान लाओ और अल्लाह के लिए अपना दिल पसन्द धन नातेदारों, अनाथों, मुहताजों, मुसाफ़िरों पर, मदद के लिए हाथ फैलानेवालों पर और ग़ुलामों को आज़ाद कराने पर ख़र्च करो....।" (क़ुरआन, 2:177)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के एक कथन के अनुसार—

> "मैं और यतीमों की सहायता करनेवाला स्वर्ग में एक साथ होंगे।"
>
> (बुख़ारी)

3. ग़ुलाम

हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के समय में दास प्रथा का चलन था। दास-दासियों की स्थिति अति दयनीय थी। बराबरी तो दूर वे बुनियादी मानवाधिकार से भी वंचित थे। इस्लाम ने उन्हें मानवाधिकार दिए, समाज में उनको बराबर का दर्जा दिया जो केवल कहने के लिए नहीं, बल्कि व्यवहार में अपनाया गया। जिसके कुछ उदाहरण आगे प्रस्तुत किए जा रहे हैं। इसके साथ ग़ुलामों को आज़ाद करने की प्रक्रिया में इसे बड़े पुण्य के कार्यों में रखा गया और जैसा कि ऊपर क़ुरआन के उद्धरण (2:17) से भी स्पष्ट है। ज़कात फ़ंड के ख़र्च की मदों में एक मद रखी गई। इसके अतिरिक्त पापों के प्रायश्चित तथा कुछ अन्य कार्यों को ग़ुलाम आज़ाद करने से जोड़ा गया। इसका परिणाम यह हुआ कि एक ओर तो सामाजिक भेदभाव समाप्त हुआ, दूसरी ओर धीरे-धीरे इस कुप्रथा का अन्त हो गया। इस संबंध में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने ग़ुलामों के बारे में निर्देश दिया—

"ये तुम्हारे भाई हैं जो तुम्हारे सेवक हो गए हैं। अल्लाह ने उन्हें तुम्हारे मातहत कर दिया है, तो जिसका भाई उसके मातहत हो तो चाहिए कि उसे वही खिलाए जो स्वयं खाए और उसे वही पहनाए जो स्वयं पहनता है, और उसपर किसी ऐसे कार्य का बोझ न डाले जो वह कर न सके। फिर अगर उसपर किसी ऐसे कार्य का बोझ डालो तो उसमें हाथ बटाकर मदद करो।" (बुख़ारी, मुस्लिम)

4. ग़ैर-मुस्लिम

समाज में अलग-अलग विचार और आस्थाएँ रखनेवाले लोग होते हैं। जो लोग इस्लाम धर्म में विश्वास नहीं रखते उनके साथ भी अच्छा व्यवहार करने की ताकीद की गई है। पड़ोसियों, यतीमों, मुहताजों, ग़ुलामों, यात्रियों आदि की सहायता में मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम सबको सम्मिलित किया गया है। क़ुरआन में कहा गया है—

> "अल्लाह तुम्हें इससे नहीं रोकता कि तुम उन लोगों के साथ अच्छा व्यवहार करो और उन्हें उनके हिस्से की आर्थिक सहायता पहुँचाओ, जिन्होंने तुमसे धर्म के मामले में युद्ध नहीं किया और न तुम्हें घरों से निकाला....।" (क़ुरआन, 60:8)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया—

"निस्संदेह सब बन्दे (अर्थात् इनसान) आपस में भाई-भाई हैं।"

(मुसनद अहमद)

"सभी मख़लूक़ (जीव) अल्लाह का कुनबा या घराना है। अल्लाह को प्रिय हैं वे लोग जो उसके घराने के साथ उत्तम व्यवहार करें।"

(मिश्कात)

आशय यह है कि विचार या आस्था में अन्तर होने पर सामाजिक भेदभाव नहीं किया जा सकता।

आर्थिक उपाय

सामाजिक न्याय के लिए आर्थिक पक्ष बहुत महत्वपूर्ण होता है। इस्लाम ने इस क्षेत्र में जो क्रान्ति रची वह अनुपम है। प्रत्येक प्रकार के एकाधिकार को समाप्त किया। ब्याज, जो शोषण और असमानता का प्रमुख हथियार था, प्रतिबंधित किया गया। ज़कात (अनिवार्य दान) सम्पन्न लोगों से लेकर असम्पन्न, ग़रीब, मुहताज, यतीम और असहाय तक पहुँचाने की मज़बूत व्यवस्था की। जुआ और सट्टे तथा सभी धोखे, नशा और वेश्यावृत्ति को बन्द किया। फिर क़ुरआन में एक अति महत्वपूर्ण आदेश दिया गया।—

"ऐसा न हो कि तुम्हारा धन तुम्हारे धनवानों के बीच ही चक्कर लगाता रहे।" (क़ुरआन, 59:19)

अर्थात् धन का बहाव ज़रूरतमन्दों की ओर होना चाहिए। क़ुरआन में यह स्पष्ट किया गया कि—

"उनके मालों में ज़रूरतमन्दों तथा वंचितों का हक़ होता है।"

(क़ुरआन, 51:19)

उत्तराधिकार के क़ानून द्वारा एकत्रित धन को समाज में वितरित कर दिया। श्रमिक को जो प्रायः समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता है उसे इस्लामी समाज में सम्मानजनक स्थान दिया गया। इसमें विस्तार में जाने का अवसर नहीं, हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के एक आदेश का उल्लेख यहाँ पर्याप्त होगा—

"मज़दूर की मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले दे दो।"

(मिश्कात)

संक्षेप में कहा जा सकता है कि आर्थिक उपायों द्वारा असमानता को दूर करने तथा असम्पन्न को शक्ति देने के ठोस उपाय इस्लामी व्यवस्था में देखे जा सकते हैं।

व्यवहार में समता, समानता और न्याय

इतिहास के पन्नों में ऐसी अनगिनत घटनाएँ प्रामाणिक रूप से उपलब्ध हैं जिनसे ज्ञात होता है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने ऊँच-नीच, भेदभाव एवं असमानता की ज़ंजीरें स्वयं काटकर एक आदर्श प्रस्तुत किया। यहाँ कुछ नमूने प्रस्तुत हैं—

- ❖ ज़ैद बिन हारिसा (रज़ि॰) हज़रत ख़दीजा के ग़ुलाम थे, जिन्हें उन्होंने हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के सेवाकार्य के लिए दे दिया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने उन्हें ग़ुलामी से आज़ाद किया और अपना बेटा घोषित कर दिया। इतना ही नहीं, बाद में अपनी फुफेरी बहन का विवाह हज़रत ज़ैद से करा दिया जो उस समय के समाज के लिए अनोखी घटना थी। उन्हें एक फ़ौजी मुहिम का सेनापति बनाकर भेजा। उनके बाद उनके बेटे उसामा को भी रोम जानेवाली सेना का सेनापति नियुक्त किया। उस सेना में मक्का-मदीना के प्रतिष्ठित लोग उनके अधीन थे।
- ❖ बिलाल (रज़ि॰) एक अश्वेत ग़ुलाम थे। उनके मुसलमान होने पर उनका मालिक यातनाएँ देने लगा, इसलिए हज़रत अबू-बक्र (रज़ि॰) ने उन्हें आज़ाद करा लिया। हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने ग़ुलाम रहे अश्वेत बिलाल को पूरा सम्मान दिया। उनकी वाणी मधुर और तेज़ थी, इसलिए उन्हें लोगों को नमाज़ के लिए बुलाने अर्थात् अज़ान देने का सम्मानजनक कार्य सौंपा। मक्का विजय के दिन उन्हें काबा की छत पर चढ़कर अज़ान देने का आदेश दिया गया। अज्ञानताकाल की परम्पराओं के अनुसार यह अत्यन्त आपत्तिजनक कार्य था कि ग़ुलाम रह चुका काला हब्शी, जिसे वे 'नीच' समझते थे, काबा के ऊपर चढ़े। मक्का-मदीना के लोग हज़रत बिलाल (रज़ि॰) को 'ऐ हमारे सरदार' कहकर बुलाते थे।

यही व्यवहार अन्य कमज़ोर व्यक्तियों के साथ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) और उनके साथियों का था।

❖ इस्लामी इतिहास की एक प्रसिद्ध घटना निष्पक्ष और बेलाग इनसाफ़ का चित्र प्रस्तुत करती है। इस्लामी आन्दोलन से पूर्व न्यायिक प्रक्रिया भी प्रदूषित थी। अलग-अलग वर्गों के लिए अलग-अलग क़ानून और सज़ाएँ थीं। इस्लाम ने साफ़-सुथरे और निष्पक्ष इनसाफ़ पर बल दिया। एक घटना से इस तथ्य की पुष्टि होती है। मक्का विजय के समय फ़ातिमा नाम की मख़ज़ूम क़बीले की महिला पर चोरी का अपराध सिद्ध हुआ। मामला एक प्रभावपूर्ण क़बीले की प्रतिष्ठित महिला का था, इसलिए उसे दंडित न किए जाने के प्रयास होने लगे और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) से सिफ़ारिश की गई। उन्होंने लोगों को इकट्ठा किया और जो संबोधन किया वह इतिहास में सुनहरे अक्षरों से लिखे जाने योग्य है। संबोधन का सार इस प्रकार है—

> “लोगो! तुमसे पहले के लोगों के नाश का कारण यह था कि जब उनमें से कोई बड़ा व्यक्ति अपराध करता तो उसे छोड़ दिया जाता और यदि कमज़ोर व्यक्ति यही अपराध करता तो उसे दंडित कर दिया जाता। मैं ईश्वर की सौगंध खाकर कहता हूँ कि अगर मेरी बेटी फ़ातिमा भी चोरी करे तो उसे दंडित करूँगा।”

❖ महाईशदूत हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के बाद उनके ख़लीफ़ाओं ने भी इतिहास पर अमिट छाप छोड़ी। यहाँ एक घटना प्रस्तुत है। दूसरे इस्लामी शासक हज़रत उमर (रज़ि॰) के कार्यकाल में इस्लामी सेना फ़िलस्तीन में थी। वहाँ के लोगों ने कहला दिया कि तुम्हारे ख़लीफ़ा स्वयं आ जाएं, हम उनसे वार्ता करेंगे। ख़लीफ़ा हज़रत उमर (रज़ि॰) अपने हेडक्वाटर मदीना में थे। उनको सूचना मिली तो यात्रा पर निकल पड़े। वह और उनके सेवक दोनों चले, मगर सवारी के लिए ऊँट एक ही था। हज़रत उमर के निर्णय के अनुसार एक मंज़िल

स्वयं ऊँट पर बैठते और सेवक पैदल चलता। दूसरी मंज़िल पर सेवक सवार होता और ख़लीफ़ा पैदल चलते। पूरी यात्रा इसी नियम के तहत हुई। अन्तिम पड़ाव के बाद ऊँट पर सवार होने की बारी सेवक की थी, मगर वह चाहते थे कि ख़लीफ़ा ऊँट पर सवार हों जाएँ, मगर हज़रत उमर तैयार न हुए। परिणामतः ख़लीफ़ा फ़िलस्तीन में इस प्रकार दाख़िल हुए कि उनका सेवक ऊँट पर सवार था और हज़रत उमर ऊँट की नकेल थामे पैदल चले आ रहे थे। फ़िलस्तीन के ईसाई पादरी और जनता इस दृश्य को देखकर आश्चर्यचकित हो गए और इतने प्रभावित हुए कि किसी प्रतिरोध के बग़ैर संधि कर ली।

❖ इस्लामी राज्य के चौथे ख़लीफ़ा हज़रत अली (रज़ि॰) का न्यायालय में मुक़दमा हारने का मामला भी बड़ा रोचक और अभूतपूर्व है। उनका कवच खो गया जो कूफ़ा नगर के एक यहूदी के यहाँ पाया गया। मुक़दमा क़ाज़ी (न्यायाधीश) की अदालत में पहुँचा। ख़लीफ़ा हज़रत अली एक साधारण नागरिक की भाँति अदालत में पेश हुए और कवच पर अपना दावा प्रस्तुत किया। क़ाज़ी ने गवाही माँगी तो उन्होंने अपने बेटे को गवाह के रूप में पेश किया। क़ाज़ी ने बेटे की गवाही को अस्वीकृत कर दिया और हज़रत अली का कवच पर दावा ख़ारिज कर दिया। इस प्रकार वक़्त का ख़लीफ़ा अपनी ही अदालत में मुक़दमा हार गया। परन्तु यहूदी अदालत के इस फ़ैसले से अत्यन्त प्रभावित हुआ और उसने स्वयं स्वीकार किया कि यह कवच वास्तव में ख़लीफ़ा हज़रत अली ही का है।

ये कुछ नमूने हैं, विस्तार में जाने का मौक़ा नहीं, हाँ इस्लामी साहित्य के अध्ययन से विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसी समता, समानता और सामाजिक न्याय के कारण ग़ुलामी से आज़ाद हुए लोग उच्च पदों पर आसीन हुए और कई देशों में शासक भी रहे। मिस्र के ममलूक और हिन्दुस्तान के ग़ुलाम वंश की हुकूमतें इसका उदाहरण हैं।

मुसलमानों की ज़िम्मेदारी

समता, समानता और सामाजिक न्याय के इस्लाम के सिद्धान्तों तथा उनको समाज में लागू करने के क्रान्तिकारी एवं प्रभावी विवरणों के बीच भारतीय उपमहाद्वीप के मुसलमानों को स्वीकार करना होगा कि यहाँ उन आदर्शों पर अमल करने में कोताही हुई। इस्लामी शिक्षाओं से दूरी के कारण समाज में पूर्व में व्याप्त असमानता को स्वीकार कर लेना किसी प्रकार भी उचित नहीं माना जा सकता। मुस्लिम शासकों ने अपने राजनैतिक हितों के चलते उस ऊँच-नीच, छूत-छात को समाप्त नहीं किया जिसने करोड़ों इनसानों को प्रभावित कर रखा था। यह उनका नैतिक, धार्मिक और मानवीय कर्तव्य था कि वे इस अन्याय को मिटाने के लिए ठोस प्रयास करते तथा न्याय की स्थापना के लिए आगे आते। क़ुरआन में कहा गया है—

> "ऐ आस्थावान लोगो! इनसाफ़ के ध्वजावाहक और अल्लाह के लिए गवाह बनो, चाहे तुम्हारा इनसाफ़ तुम्हारी गवाही ख़ुद तुम्हारे स्वयं के या तुम्हारे माता-पिता और रिश्तेदारों के विरुद्ध ही क्यों न पड़ती हो।" (क़ुरआन, 4:135)

पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के अनेक निर्देश हैं जिनके अनुसार ज़ुल्म व अत्याचार को समाप्त करने तथा न्याय की स्थापना के लिए आगे आना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया तो वे ईश्वर के प्रकोप के भागी होंगे।

जो लोग इस्लाम में आस्था रखते हैं और सारे इनसानों को ईश्वर का कुनबा मानते हैं, सभी को एक जोड़े हज़रत आदम और हज़रत हव्वा की सन्तान समझते हैं, जिनका विश्वास है कि इस्लाम के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने काले-गोरे, अमीर-ग़रीब, ग़ुलाम-आक़ा जैसे सारे अन्तर और भेदभाव अपने पैरों तले कुचल दिए थे, उन सब मुसलमानों की ज़िम्मेदारी है कि इन उसूलों को भारतीय समाज में प्रचारित करें। दबे-कुचलों को इस प्रकार ऊपर उठाएँ कि उन्हें बराबरी का दर्जा मिले और वे वर्गीय रस्साकशी के कुचक्र से बाहर निकल सकें। स्वतन्त्र भारत में छूत-छात को प्रतिबन्धित करने और दलित व पिछड़ों को ऊँचा उठाने के जो क़दम उठाए गए हैं उनकी सराहना की

जानी चाहिए, परन्तु सामाजिक न्याय के लिए अभी और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है।

भारतीय मुसलमानों में स्थानीय प्रभावों के कारण ऊँच-नीच की कुछ धारणाओं ने जन्म लिया। कुछ बिरादरियों को ऊँचा और कुछ को नीचा समझा गया, विशेषकर विवाह के मामले में। यह एक बुराई है जिसे गंभीरता से लेना चाहिए। मुस्लिम उलमा, बुद्धिजीवियों तथा समाज सुधारकों को आगे आकर इस बुराई को समूल नष्ट करना चाहिए।

उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस्लाम ने प्रत्येक प्रकार के सामाजिक भेदभाव को समाप्त करने में प्रभावपूर्ण सफलता प्राप्त की। गुलामों और दासों को मानवाधिकार ही नहीं, सम्मान भी प्रदान किया। रंग-भेद की जड़ काट दी। भाषा और क्षेत्र को कभी समस्या नहीं बनने दिया। क़ुरआन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की शिक्षाएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण है, परन्तु उतना ही महत्वपूर्ण यह तथ्य है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने स्वयं उन्हें समाज में स्थापित किया। अरब के अन्धकारपूर्ण वातावरण में ऊंच-नीच एवं भेदभाव रहित समाज की ऐसी मज़बूत आधारशिला रखी कि उसके प्रभाव विश्व के कोने-कोने तक पहुंचे। सामाजिक न्याय के मार्ग से यदि कहीं भटकाव दिखा तो वह स्वयं व्यक्तियों का भटकाव था, सिद्धान्तों और शिक्षाओं पर अमल न करना उसका कारण था। उसमें इस्लामी व्यवस्था की नाकामी का दख़ल नहीं था। सामाजिक न्याय की स्थापना की इस सफलता के मूल में इस्लामी आस्था, ईश्वर के समक्ष जवाबदेही की अवधारणा तथा परलोक में दुनिया के कर्मों का बेलाग हिसाब एवं स्वर्ग के इनाम तथा नरक की यातना के विश्वास का भी बड़ा महत्व है। यदि ये विश्वास शिथिल हो जाते हैं तो धरती पर अन्याय और भेदभाव का बोलबाला हो जाता है। साथ ही सामाजिक न्याय को लागू करनेवाली व्यवस्था का आदर्श होना तथा उसके कार्यकर्ताओं का आस्थावान तथा चरित्रवान होना भी आवश्यक है।